'कुरूक्षेत्र' : सन्देश एवं जीवन दर्शन

डॉ॰ उमा रानी श्रीवस्तव*

'कुरूक्षेत्र' श्री दिनकर जी की एक ऐसी रचना है जिसमें राष्ट्रीय भावना के विकास का शंखनाद है, वसुधैवकुटुम्बकम् की भावना का उद्घोष है और कर्मण्येवाधिकारस्ते का गान है। इसे आधुनिक युग की गीता भी कह सकते हैं। इसमें दिनकर जी ने युध्द की विभीषिका से निराश एवं सन्यास लेने की भावना से अनुप्राणित व्यक्ति को आशा एवं कर्मवाद का सन्देश दिया है। दिनकर जी की दृष्टि में पाप और अनाचार से त्रस्त होकर भाग खड़ा होना और सन्यास लेकर वन में जा पहुँचना मानव धर्म नहीं है। मनुष्यता का विकास मानव समाज में रहकर ही किया जा सकता है। कुरूक्षेत्र के प्रथम दो सर्गो में युध्द के ध्वंसात्मक स्वरुप पर विचार है। तृतीय, चतुर्थ एवं पंचम सर्गो में युध्द से मुक्ति के उपाय बताए गए हैं तथा साथ ही अत्याचार शोषण, असमानता, असहिष्णुता आदि को नष्ट करने के उपाय बतलाए गए हैं। छठे सर्ग में विज्ञान के संहारक रुप से छुटकारा पाने के लिए कवि ने वैज्ञानिक दौड़ को बन्द करने की सलाह दी है। अन्तिम सर्ग में आशा एवं उत्साह के साथ जीवन क्षेत्र में अवतरित होने के लिए प्रोत्साहित किया गया है।

सात सर्गो में विभाजित कुरूक्षेत्र युगादर्शो को स्थापित करने वाला विचारात्मक काव्य है। यह काव्य अपने समय और समाज के प्रति जागृति का सन्देश देता है। दिनकर जी ने कुरूक्षेत्र में महाभारत के प्रमुख पात्रों के माध्यम से आधुनिक युध्द विज्ञान की विनाशकारी शक्तियों और मनुष्यों के स्वार्थ बुध्दि के विपरीत सोचने का सन्देश दिया है।

महाभारत में भीषण नरसंहार देखकर धर्मराज का ह्रदय करूणा, क्षोभ,कुन्ठा एवं निराशा से भर जाता है। इसी कारण वे संसार को त्यागकर सन्यास लेना चाहते है। उचित मार्ग दर्शन के लिए वे भीष्म पितामह के पास जाते है। जहाँ उन्हें ज्ञान का प्रकाश मिलता है और फिर वे मानवता के विकास के लिए अग्रसर हो जाते हैं। भीष्म का निम्न कथन दर्शनीय है–

आशा के दीप जलाए चलो धर्मराज,
एक दिन होगी मुक्त भूमि रण भीति से।
भावना मनुष्य की न राग में रहेगी लिप्त
सेवित रहेगा नहीं जीवन अनीति से
हार से मनुष्य की महिमा न घटेगी और
तेज न बढेगा किसी भावना की जीत से
स्नेह बलिदान होंगे माप नरता के एक
धरती मनुष्य की बनेगी स्वर्ग प्रीति से।

कवि का मानना है कि युद्ध से मानवता का विकास अवरुध्द नहीं होता बल्कि नवयुग का निर्माण होता है–

यह होगा महारण राग के साथ
युधिष्ठिर ही विजयी निकलेगा
नर संस्कृति की रण छिन्न लता पर
शांति सुधा फल दिव्य फलेगा
कुरूक्षेत्र की धूलि नहीं इति पन्थ की,
मानव ऊपर और चलेगा
मनु का यह पुत्र निराश नहीं
नव धर्म प्रदीप अवश्य जलेगा।

कवि ने सन्यास मार्ग को ऐकान्तिक,निष्फल और भ्रामक बताकर पृथ्वी पर रहकर मिट्टी की ओर बढ़ने का संदेश सुनाया है। कर्मों का त्याग मनुष्य को जीवन से दूर ले जाता है। अकर्मण्यता ही सन्यास

* **असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, आर्य कन्या डिग्री कालेज, हरदोई**

या निवृत्ति की प्रेरणा देती है। संसार को त्यागकर किसी लोकातीत सुख या कल्याण के पीछे दौड़ना निष्फल है। भीष्म कहते है कि–

जनाकीर्ण जग से व्याकुल हो
निकल भागना वन में
धर्मराज है घोर पराजय
नर की जीवन रण में
यह निवृत्ति है ग्लानि, पलायन
का यह कुत्सित क्रम है
निःश्रेयस यह श्रमित पराजित
विजित बुद्धि का भ्रम है।

आज भाग्यवाद के मिथ्यादर्श का आधार लेकर सामाजिक वैषम्य और ऊँच नीच का पोषण किया जाता है। लोग समझते हैं कि धनिकों के भाग्य में धन लिखा है अथवा वह उनका पूर्व जन्म का अर्जित अधिकार है। निम्न पंक्तियों में कवि ने भीष्म के मुख से भाग्यवाद का उपहास कराया है–

और मरा जब पूर्व जन्म में,
वह धन संचित करके
विदा हुआ था न्यास समरजित
किस के घर में धर के?
जन्मा है वह जहाँ आज,
जिस पर उसका शासन है
क्या है यह घर वहीं और
यह उसी न्यास का धन है?

आज का समाज वैयक्तिक भोगवाद पर स्थिर है। वह अपनी अधिकार सत्ता औरों से पृथक मानता है। इस भेद दृष्टि को मिटाकर मनुष्य मात्र के भौतिक, मानसिक और बौद्धिक विकास के लिए प्रयास करना चाहिए। मनुष्य मनुष्य में जन्मना कोई भेद नहीं। सबके अधिकार समान हैं। कृत्रिम वैषम्य को दूर करके ही मनुष्य सुखी रह सकता हैं।

जब तक मनुष्य के सुख–दुख, सुविधाओं उपयोग आदि में समता नहीं होगीं, मनुष्य–मनुष्य में बडा अन्तर रहेगा तब तक शान्ति की स्थापना मात्र कल्पना है–

जब तक मनुज, मनुज का सुख भाग नहीं सम होगा,
शमित न होगा कोलाहाल संघर्ष नहीं कम होगा।
था पथ सहज तीव सम्मिलित हो समग्र सुख पाना,
केवल अपने लिए नहीं कोई सुख भाग चुराना।
इस वैयक्तिक भोगवाद से फूटी विष की धारा,
तड़प रहा जिसमें पड़कर मानव समाज यह सारा।

संक्षेप में कवि का संदेश है कि पृथ्वी पर शान्ति की शाश्वत प्रतिष्ठा तभी सम्भव है जब उपभोज्य वस्तुओं का अभीष्ट भाग समाज में समुचित रुप सें सभी को प्राप्त हो, स्वार्थ और संचय का त्याग और तिरस्कार हो तथा मानव–मानव के बीच प्रेम सौहार्द की स्थापना हों।

इतना ही नहीं कवि मानव–मानव में किसी प्रकार का भेद नहीं मानता इसीलिए वह प्राकृतिक सामग्री पर मनुष्यों के समान अधिकार की घोषणा करता हैं–

जो कुछ न्यस्त प्रकृति में है, मनुष्य मात्र का धन है
धर्मराज उसके कण–कण का, अधिकारी हर जन है।

दिनकर जी के विचार ऊँच –नीच की भावना से परे हैं। उनकी मान्यता है कि विश्व के सभी मानव समान हैं। यहाँ न कोई राजा है न प्रजा–

कौन यहाँ राजा किसका है? किसकी कौन प्रजा है?

किन्तु आज का मनुष्य यह भूल चुका है।वह मानवीय हितों को तिलांजलि देकर वैयक्तिक संतुष्टि के लिए प्रयत्नशील है। मानव को वैयक्तिक सुखो को भूलकर मानवमात्र के कल्याण में लग जाना चाहिए। उसे देश के सुख को अपना सुख तथा दुःख को अपना दुःख समझना चाहिए–

"वह सुख जो मिलता असंख्य, मनुजों को अपनाकर
हँसकर उनके साथ हर्ष में और दुःख में रोकर
वह जो मिलता भुजा – पंगु की ओर बढ़ा देने से
कन्धों पर दुर्बल दरिद्र का बोझ उठा लेने से।"

आज मनुष्य भाग्यवाद को प्रश्रय देता हैं और परिश्रम से कमाई दूसरों की सम्पत्ति को बेईमानी से हड़पनें की कोशिश करता है–

एक मनुष्य संचित करता है, अर्थ पाप के बल से
और भोगता उसे दूसरा, भाग्यवाद के छल से।

कवि ने 'कुरुक्षेत्र' में भाग्यवाद की निन्दा करते हुये श्रम की महत्ता को प्रतिपादित किया है। वह भाग्यवाद के द्वारा शोषण करने वाले समाज के लुटेरों पर कटु व्यंग्य करते हुए ऊँच नीच का वैषम्य उपस्थित करने वाले पूंजीपतियों से पूछता है–

यह भी पूछो,धन जोड़ा, उसने जब प्रथम प्रथम था,
उस संचय के पीछे तब किस भाग्यवाद का क्रम था ?

भाग्यवाद एवं पुनर्जन्म के विरोध द्वारा कवि यह प्रदर्शित करना चाहता है कि जब तक विश्व में इन रुढ़ियों का विरोध नहीं होगा इनका अन्त नहीं होगा तब तक सुख शांति की स्थापना असम्भव है।

कवि की यह घोषणा है कि मानव अपने उद्यम एवं परिश्रम द्वारा ब्रह्मा के लेख को भी मिटा सकता है। कायर एवं निरुद्यमी व्यक्ति ही अपने भाग्य पर विश्वास करते है–

ब्रह्मा का अभिलेख पढ़ा करते निरुद्यमी प्राणी,
धोते वीर कुअंक भाल का बहा भ्रुवों से पानी।

इसी क्रम में कवि राजतंत्र का भी विरोध करता है। इसे हटाकर वह समाज में समता और स्वतंत्रता लाना चाहता है। यह कार्य सन्यास, एकान्तवास या वैयक्तिक सुख चिन्तन द्वारा असम्भव है। कवि मनुष्यों को कर्मवाद का संदेश देते हुआ कहता है कि–

मिट्टी का यह भार संभालो बन कर्मठ सन्यासी,
पा सकता कुछ, नहीं मनुज बन केवल व्योम प्रवासी।

कवि अकर्मण्यता से होने वाले हानियों का विवेचन करते हुये कहता है–

सुविकच स्वस्थ सुरम्य सुमन को मरण भीति दिखलाकर
करती है रसभंग काल का ,भोजन उसे बताकर।

अतएव मानव का कर्तव्य है कि अकमर्ण्यता का विरोध करें क्यों कि कर्म और ज्ञान के सामन्जस्य के बिना कलह ,असन्तोष और प्रतिस्पर्धा का मिटाना असम्भव है–

"जहाँ भुजा का एक पन्थ हो अन्य पन्थ चिन्तन का,
सम्यक का रुप नहीं खुलता उस द्वन्द्व ग्रस्त जीवन का। "

कवि स्वर्ग नर्क की कल्पना का भी खण्डन करताहै। उसके अनुसार आकाश के उपर सब शून्य है जो कुछ है इस पृथ्वी पर है इसलिये मनुष्य को इस पृथ्वी की और जीवन की सार्थकता को समझना चाहिये –

उपर सब कुछ शून्य शून्य है कुछ भी नही गगन में
धर्मराज! जो कुछ है, वह है मिट्टी में जीवन में ।
सम्यक विधि से इसे प्राप्तकर नर सबकुछ पाता है
मृत्ति जयी के पास स्वयं ही अम्बर आता है।

कुरूक्षेत्र में पितामह द्वारा युधिष्ठिर को दिया गया सन्देश प्रत्येक भारतवासी के लिए है। वह भारत के बच्चे–बच्चे को प्रेरणा देता हैं। अपने देश एवं जाति को सबल बनाने की प्रेरणा देता हैं। दिनकर जी ने तो यहाँ तक कहा है कि न्याय के लिए लड़ना पाप नहीं हैं। अत्याचार को सहन करना

संसार में सबसे बड़ा पाप हैं। यदि अधिकार मांगने से न मिले तो लड़कर उसे अर्जित करना चाहिए जिसमे लड़ने की शक्ति नहीं वह पिसता रहा और पिसता रहेगा–

"न्यायोचित अधिकार मांगने से न मिले तो लड़के
तेजस्वी छीनते समर को, जीत या कि खुद मरके।"

कवि का कथन है कि अत्याचार का प्रतिरोध होना चाहिए। पाप को सहन करना पाप करने से भी बड़ा पाप है।अपने स्वत्व की रक्षा करना अति आवश्यक है।वास्तव में अन्याय और दमन को समझ कर भी उसे सहते जाना उसका प्रतिशोध न करना,शांत रहना पाप हैं। ऐसे अवसर पर विरोध और क्रांति से विरक्ति लेना एवं मौनव्रत धारण करना महापाप हैं। शोषण और अत्याचार को सहकर जो शांति स्थापित होती है वह वास्तव में अशांति का रुप होती है–

शोषण् की श्रृंखला के हेतु बनती जो शांति
युद्ध हैं यथार्थ में वो, भीषण अशांति है
सहना उसे ही मौन, हार मनुजत्व की है
ईश की अवज्ञा घोर, पौरुष की श्रान्ति है
पातक मनुष्य का है, मरण मनुष्यता का
ऐसी श्रृंखला में धैर्य विप्लव है, क्रांति है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि 'कुरूक्षेत्र' में दिनकर जी ने ऐतिहासिक आधार की रक्षा करते हुए सामायिक एवं समाज के लिए उपयोगी कतिपय तथ्यों को हमारे सामने रखने के चेष्टा की हैं। विशेषतः उन्होने नवयुग की नवयुवक जागृति, न्याय और समता के लिए उत्पीड़ितो की क्रांति और भाग्यवाद एवं अकर्यण्यता का विरोध आदि की जो जोरदार आवाज उठाई हैं वह आज हमारे लिए ग्रहणीय हैं।

निष्कर्षतः हम कह सकते है कि दिनकर जी के मतानुसार सम्प्रति सुख एवं शांति तभी सम्भव है, जब मनुष्य व्यवहारिक जीवन के प्रति जागरुक बने एवं कर्मशील बने।उनका मानना है कि यदि प्रेम, परोपकार, क्षमा, दया, सहानुभूति, ममता आदि सद्वृत्तियों के विकास के साथ मानव कर्मशील बन जाए तो देश की समस्त समस्यायें स्वतः हल हो जायेंगी और वही मानवता की विजय का दिन होगा –

उस दिन होगा सुप्रभात नर के सौभाग्य उदय का,
उस दिन होगा शंख ध्वनित, मानव की महा विजय का।

सन्दर्भ ग्रन्थ –

1. बाजपेयी, नन्ददुलारे, हिन्दी साहित्य–बीसवीं शताब्दी – पेज नं0 166–178, संस्करण–2002 लोक भारती, 15 ए महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद–1
2. सक्सेना, द्वारिका प्रसाद, हिन्दी के आधुनिक प्रतिनिधि कवि – पेज नं0 368–370, नवीनतम संस्करण विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा
3. विश्वम्बर मानव, आधुनिक कवि – पेज नं0 462–465, संस्करण 1965 लोकभारती प्रकाशन, 15 ए महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद–1
4. शर्मा, श्रीनिवास, हिन्दी के आधुनिक प्रतिनिधि कवि – पेज नं0 148–150, संस्करण 1977 तक्षशिला प्रकाशन, 23/4762 अन्सारी रोड दरियागंज नई दिल्ली–110002
5. तिवारी, रामदेव, आधुनिक हिन्दी काव्य, पेज नं0 276–279 संस्करण 2015 साहित्य रत्नालय–गिलिस बाजार, कानपुर
6. शुक्ला, ह्रषीकेश, दिनकर, रामधारी सिंह, हिन्दी साहित्य सम्पूर्ण अध्ययन – पेज नं0 15–24,संस्करण 2004–2005 शिक्षा साहित्य प्रकाशन,उस्मानपुरा, वाराणसी